भारतीय कृषि सांख्यिकी संसद

(हिन्दी परिशिष्ट)

खण्ड ६] १९५४ [अंक १

अनुक्रमणिका

पृ. सं.

१. दूर-पूर्व की कृषि अवस्था iii

२. संतुलन समस्याओं से उत्पन्न कुछ बंटन vii
पी. वी. कृष्ण अय्यर

३. तुल-अपूर्ण इष्टका और आंशिक तुल-अपूर्ण इष्टका समनुविधानों के संबंध में vii
पुरनेन्दु मोहन राय

४. चल-संभावी अप्रतिस्थापित न्यादर्श की दक्षता के संबंध में .. viii
दरोगा सिंह

५. लुप्त केदार और तुल्य अपूर्णता के साथ समसंभावि इष्टका समनुविधान .. viii
एम. एन. दास

६. आगणन के निष्पत्ति रीति से उपनिदर्शन समनुविधान में स्तृतक्रम की दक्षता ix
वी. के. मोकाशी

७. अभिवेचित द्वि-चलक न्यादर्शों से आगणन ix
एम. एन. भट्टाचार्य

८. सहसंबंधित द्वि-चलक प्रसामान्य समग्र से लिये गये किसी भी आकार के समसंभावि न्यादर्श में न्यादर्श-प्रमाप विचलन के निष्पत्ति के बंटन के संबंध में एक उल्लेख x
डी. पी. बनर्जी

अनुवादक—**तारकेश्वर प्रसाद**

दूर-पूर्व-की कृषि अवस्था*

सातवें वार्षिक सर्वसाधारण सम्मेलन में उपस्थित प्रत्यायुक्तों के सम्मुख अभिभाषण के लिये संसद ने डा. लोकनाथन को निमंत्रित किया था। अपने भाषण के लिये उन्होंने जो विषय चुना वह था—"दूर-पूर्व की कृषि अवस्था"। इस विषय पर डा. लोकनाथन के विस्तृत ज्ञान से सभी परिचित हैं। विषय विशेष का उल्लेख करने से पहले उन्होंने दूर-पूर्व के कृषि संबंधी सांख्यिकी पर प्रकाश डाला। संयुक्त राष्ट्रीय खाद्य और कृषि परिषद ने इस भूखंड के देशों से अपने सांख्यिकी के सुधारने के लिये अनुरोध किया है। सन् १९४७ में जब एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन ने अपना काम प्रारम्भ किया, तब इसके आवश्यकताओं के लिये जिन सांख्यिकी की जरूरत थी वे न केवल अत्यन्त थोड़े थे, वरन् उनमें अच्छे सांख्यिकी में होने वाले कोई गुण भी न थे। अनेक देशों में तो कोई सांख्यिकी थी ही नहीं, जो भी उनके पास थे वे युद्ध में नष्ट हो चुके थे। सन् १९४९ के बाद, खाद्य और कृषि संस्था और एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन ने इस प्रदेश से सदस्य राज्यों के अनेक सम्मेलन बुलाये हैं जिसके फलस्वरूप इसकी अवस्था में बहुत कुछ सुधार हुआ है। इन दो संस्थाओं के कार्य्यों ने इन देशों के सरकारों को विश्वासनीय सांख्यिकी इकट्ठा करने का प्रोत्साहन दिया, और सांख्यिकी का एक काफी बड़ा आकार खड़ा कर दिया, जिसे सभी देशों ने अत्यन्त मूल्यवान स्वीकार किया है। इन देशों ने अपनी तरफ से एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन द्वारा प्रकाशित आर्थिक पत्रिकाओं और आर्थिक आपरीक्षण के उल्लेखों के लिये सारभूत सांख्यिकी सूचनाएँ भी दी हैं। अब इस प्रदेश के प्रत्येक राज्य में एक सांख्यिकी संस्था है और यह एक अत्यन्त वांछनीय वृद्धि है क्योंकि इससे राष्ट्रीय सांख्यिकी का समन्वयन संभव हो जाता है जो अन्तर्राष्ट्रीय तुलनाओं के लिए पूर्वापेक्षित है। बहुत से देशों में तो केन्द्रीय सांख्यिकी संस्थायें हैं, और इनके द्वारा पहले से कहीं अच्छे सांख्यिकी का मिलना संभव हो गया है। इतना होते हुए भी त्रुटियाँ रह ही गयी हैं। व्यापार के संबंध में जहाँ सांख्यिकी का अच्छा विस्तार है, यह पाया गया कि अन्तर्देशीय व्यापार का सांख्यिकी अत्यन्त थोड़ा है और कृषि सांख्यिकी भी, जिसे सुधारने के लिये सभी देश प्रयत्नशील हैं, अभी तक अधूरा ही है। यहाँ या तो उत्पादन अवानुमानित है या उपभोग अति-आगणित, या सांख्यिकी के शुद्ध निवर्चन के लिये जिन कारकों की आवश्यकता है उनकी अवज्ञा की गयी है। फिर भी प्रत्येक वर्ष सांख्यिकी के ज्ञान की उन्नति का द्योतक हो रहा है; और अभी-अभी

---

* संयुक्त राष्ट्रीय एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन के कार्य्यकारिणी सचिव डा. पी. एस. लोकनाथन के भाषण का सारांश जो उन्होंने भारतीय कृषि सांख्यिकी संसद के सातवें वार्षिक सम्मेलन के अवसर पर दिया था। भारत के कृषि मंत्री डा. पी. एस. देशमुख ने अध्यक्षता की थी।

दिल्ली में एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन द्वारा राष्ट्रीय-आय पर आयोजित सांख्यिकी सम्मेलन निश्चय ही इस दिशा में अग्रसर होने का प्रमाण है । यदि न केवल राष्ट्रीय-आय पर ही, वरन् राष्ट्रीय-व्यय पर भी आंकड़े उपलब्ध हो सकें, जैसे किसी समुदाय विशेष द्वारा किये गये व्यय और सरकार द्वारा खर्च किये गये धन तथा वैयक्तिक और जनता द्वारा विनियोग और संचय, तब ये सूचनायें सार्वजनिक योजनाओं के निर्माण में बहुमूल्य सहायता प्रदान कर सकेंगे । यह आशा की जाती है कि इस सम्मेलन के पर्यालोचन से राष्ट्रीय-आय सांख्यिकी में कुछ उन्नति होगी जिसमें अनेक देश गहरी दिलचस्पी दिखा रहे हैं ।

कृषि परिस्थिति के संबंध में, विशेषतया खाद्य समस्या को लेकर गत एक या दो वर्षों में जो कुछ भी हुआ है उसने दो वर्षों में खाद्य उत्पादन अवस्था में एक क्रान्तिकारी परिवर्तन उपस्थित कर दिया है । दूसरे विश्वयुद्ध के प्रारम्भ से ही खाद्य सामग्री की समस्या कठिन थी । प्रवेश्य-देश न केवल बहुत अधिक मूल्य देते थे, वरन् आवश्यक प्रवेशन के लिये भी उन्हें अत्यधिक कठिनाइयाँ उठानी पड़ती थी । निष्क्रामण-देश यद्यपि अपनी प्रदाय को बढ़ाना चाहते थे परन्तु उन प्रदेशों में ही खपत के लिये जितना खाद्यान्न उपलब्ध था वह भी उनकी आवश्यकताओं से कहीं कम था । यह अवस्था १९५२ के मध्य तक रही । इसके बाद ही अचानक इसकी अवस्था सुधरने लगी । युद्ध से पूर्व इस भूखंड में बर्मा, श्याम तथा हिन्दचीन चावल निष्क्रामण करने वाले सबसे प्रधान तीन देश थे । आजकल केवल श्याम ही ऐसा देश है जिसने अन्तर्देशीय खपत और निष्क्रामण के लिये चावल की उपज बढ़ा ली है । युद्ध से पूर्व के समतल से बर्मा में चावल की निष्क्रामण क्षमता ५० प्रतिशत ही रह गयी है । उदाहरण के लिये, भारत और जापान दो प्रवेशन-देशों ने खाद्यान्नों की उपज बढ़ाली और इस तरह उन्होंने प्रवेशित खाद्यान्नों की मांग बहुत कुछ घटा दी । इसके अतिरिक्त प्रवेशित खाद्यान्नों का मूल्य अन्तर्देशीय मूल्य से अधिक होता ही है । इससे दोनों प्रवेशन तथा निष्क्रामण देशों के लिये एक कठिन समस्या उपस्थित हो गयी । अब भारत जैसे देश के लिये, इसकी बढ़ती हुई जनसंख्या को ध्यान में रखते हुए, और यह भी कि यहाँ प्रति व्यक्ति के लिये खाद्यान्न की खपत अत्यन्त थोड़ी है, खाद्यान्न का प्रवेशन बंद नहीं किया जा सकता । वास्तव में, भारत को खाद्यान्न का प्रवेशन करना चाहिये यदि इससे आर्थिक लाभ हो सके । इसीलिये, भारत और जापान जैसे देशों को जहाँ तक संभव हो सके या जितनी आवश्यकता हो उतनी ही कृषि उत्पादन करनी चाहिये, परन्तु उन्हें अति नहीं करना चाहिये । उन्हे प्रादेशिक उत्पादन तथा पड़ोसी देशों की समृद्धि को ध्यान में रखना चाहिये । यह भारत के लिये महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके बढ़ते हुए औद्योगिकरण के साथ इसे अपने औद्योगिक उत्पादन के लिये बाजार ढूँढ़ना पड़ेगा । वह बर्मा, श्याम, हिन्दचीन इत्यादि पड़ोसी देशों से अधिक समर्थ बाजार पाने की आशा नहीं कर सकता । बदले में ये देश चाहेंगे कि उनका अतिरेक खाद्यान्न के लिये कोई आर्थिक दृष्टि से ठोस बाजार मिले । यदि खाद्य तथा औद्योगिक उत्पादन के निष्क्रामण तथा प्रवेशन नीति के लिये कोई प्रादेशिक व्यवस्थापन हो सके तो इस प्रकार वह सभी देशों को पारस्परिक लाभ पहुँचा सकेगा । इस लक्ष्य तक

पहुँचने के लिये इस प्रदेश के प्रत्येक देश में एक कृषि योजना बनानी चाहिये, जिससे वे जान सकें कि अगले पांच वर्षों में वे कितना उत्पादन कर सकते हैं। यदि इन देशों के बीच पारस्परिक सहयोग की भावना हो तब इस समस्या का सर्वमान्य हल निकाला जा सकता है।

कृषि अवस्था का दूसरा पक्ष यह है कि इस प्रदेश के अनेक देशों में रबर, टीन, तांबा इत्यादि वस्तुओं का उन्नत उत्पादन विदेशों की मांग पर बहुत अधिक निर्भर करता है। ये इन देशों के मुख्य सस्य तथा खनिज पदार्थ हैं और इनकी उन्नति केवल विदेशी मांग के परिमाण तथा अर्घ पर अवस्थित है। यह मांग इतना अनियमित है कि इन देशों का वैभव नितांत अस्थिर बना रहता है। एशिया तथा दूर-पूर्व के आर्थिक कमीशन के अनेक सम्मेलनों में इस प्रश्न पर विचार किया गया है। इससे संबंधित देशों को अपनी आर्थिक नीति इस प्रकार बदल देने का विचार करना चाहिये जिससे कुछ प्रकार के वस्तुओं पर उनकी निर्भरता कम हो जाय। इसके लिये कृषि के अर्थ को अनेक-रूपी कर देना होगा। जिससे उन वस्तुओं का उत्पादन बढ़ा दिया जा सके जिनकी खपत देश में ही हो सके। दुर्भाग्यवश अब तक बहुत थोड़ी अनेकरूपता हो सकी है, क्योंकि व्यक्तियों की तरह देश भी अदूरदर्शी होते हैं, और उदाहरणतः जब रबर का मूल्य अधिक होता है तब वे लाभ के धन को अधिक रबर उपजाने के तरीकों पर लगा देते हैं। वास्तव में एक दीर्घकालीन दृष्टिकोण की अत्यन्त आवश्यकता है। प्रत्येक देश में द्विविध योजना होनी चाहिये, जिसमें दीर्घकालीन नीतियों की एक साधारण कार्यकारिणी बनी हो जिसके अन्तर्गत समयानुसार दो, तीन या अधिक वर्षों की योजनाएँ बनायी जा सकें। सौभाग्यवश भारत इस कठिनाई से पीड़ित नहीं है, क्योंकि यहाँ आर्थिक अनेकरूपता पहले से ही वर्तमान है।

जैसा पहले कहा जा चुका है, युद्ध के पश्चात खाद्य तथा कृषि उत्पत्ति की समस्या कठिन हो चुकी थी, फलस्वरूप सभी देशों ने सर्व प्रथम कृषि, सिंचाई, आयात-निर्यात इत्यादि की ओर ध्यान दिया, जिसका परिणाम अच्छा ही हुआ, परन्तु परिस्थिति के साथ इनकी वृद्धि न हो सकने की आशंका है। अधिक औद्योगिकरण तथा निर्माण के कार्य्यों की आवश्यकता को एक साथ ही महत्व देना चाहिये जिससे सम्पूर्ण आय की वृद्धि हो सके जो उन्नत कृषि उत्पादन का ऐसे मूल्य पर संविलन कर सके जिससे उत्पादन करने वालों को लाभ हो। औद्योगिक उन्नति के संतुलन में यदि आर्थिक उन्नति की योजना नहीं बनायी गयी तब आशंका है कि कृषि उत्पादन बढ़ाने का दौर ही खतम हो जाय, क्योंकि जब कीमतें एक सीमा से नीचे की ओर उतरती हैं तब किसान उत्पादन करना बंद कर देनें में ही लाभ समझने लगते हैं। इससे कृषि संबंधी कार्य्यक्रमों में अराजकता फैल जायगी। इस दशा में उन्नत उत्पादन के लिये आन्तरिक या विदेशों के बाजार भी नहीं मिल सकेंगे, इस प्रकार इसकी प्राथमिकता समाप्त हो जायगी। इसीलिये यह महत्वपूर्ण है कि संयोजित कृषि उन्नति के साथ निर्माणित और इससे संबंधित अन्य वस्तुओं पर भी अधिक ध्यान देने की आवश्यकता अनुभव की जाय। मूल्य का विषय भी महत्वपूर्ण है यद्यपि भारत में भी सभी मात्रा के सांख्यिकी में विचार करने लगे हैं। ऐसा सोचा जाने लगा है कि जनसंख्या में जितनी वृद्धि हुई है उसीके अनुपात से खाद्य तथा कृषि उत्पादन में भी वृद्धि होनी

चाहिये, परन्तु यह अत्यन्त बेतुका और खतरनाक दृष्टिकोण है क्योंकि एक ही दिशा के विनियोग से प्रशस्त लाभ नहीं हो सकता। दूसरे संबंधित क्षेत्रों के विनियोजन की भी आवश्यकता है जिससे एक क्षेत्र का उत्पादन दूसरे क्षेत्रों की माँगें पूरी कर सके।

इससे संबंधित अन्य विषय भी हैं। उनमें से एक कृषि विनियोग की भी समस्या है। भारत में विनियोग कार्य्यक्रम सांख्यिकी आधार के विचार से सम्पूर्ण नहीं है। जहाँ तक सार्वजनिक क्षेत्र का संबंध है, यह ज्ञात है कि भारत और राज्यों की सरकारें क्या करती हैं, परन्तु यह ठीक-ठीक पता लगाना बहुत कठिन है कि किसानों ने कितना व्यय किया। यह जानना आवश्यक है कि वास्तव में कृषि में कितना धन लगाया जाता है, और कितना व्यय होना चाहिये परन्तु यहीं पर सांख्यिकी में अन्तराल है। इतना तो सभी मानेंगे कि अभी और अधिक विनियोग की आवश्यकता है जिससे उत्पादन की वृद्धि हो सके।

भाषण के अन्त में, कृषि मंत्री डा. देशमुख ने डा. लोकनाथन को उनके पांडित्य-पूर्ण भाषण के लिये धन्यवाद दिया। उन्होंने इस बात पर ज़ोर दिया कि देशकी उन्नति में शुद्ध सांख्यिकी का कितना महत्व है। और भारतीय कृषि सांख्यिकी की उन्नति के लिये सस्य क्षेत्रों तथा सस्य-उत्पादन के आगणन में समसम्भाविक न्यादर्श रीति ने बहुत कुछ किया है। उन्होंने डा. लोकनाथन द्वारा बताये गये विशेष विचारनीय बातों की भी सराहना की। डा. देशमुख ने बताया कि यदि सभी देश स्वयंसम्पूर्ण होने की चेष्टा करें तो एक भयंकर अवस्था उपस्थित हो जायगी। इसीलिये यह आवश्यक है कि प्रत्येक देश कुछ विशेष वस्तुओं के उत्पादन की योजनाऐं बनायें और इसका निश्चय उन राष्ट्रों के पारस्परिक परामर्श से की जाय जो एक दूसरे की आर्थिक अवस्था सुधारने की इच्छा रखते हैं।

संतुलन समस्याओं से उत्पन्न कुछ बंटन

श्री पी. वी. कृष्ण अय्यर

लक्षणात्मक या इयत्तात्मक स गुणों वाले दो या अधिक पत्तियों के थाक के संतुलन से उत्पन्न अनेक बंटनों की चर्चा इस लेख में की गयी है। ड के आकार के दो न्यादर्श या और रा में जब अवलोकन का अनुक्रम इस प्रकार हो—

$$\text{या} \quad — \quad य_1 \quad य_2 \quad य_3 \quad \ldots \quad य_ड$$

$$\text{रा} \quad — \quad र_1 \quad र_2 \quad र_3 \quad \ldots \quad र_ड$$

तब $\sum (य_ड - र_ड)$, $\sum | य_ड - र_ड |$ और $\sum (य_ड - र_ड)^2$ के बंटन की चर्चा परिमित और अनन्त निदर्शन के संबंध में की गयी है। सभी संचयक अवलोकन संख्या के एकघात श्रित हैं और इसीलिये तीनों संख्यातियों का बंटन जब ड अनन्त होता है, प्रसामान्य आकृति बन जाता है। एक सारणी उपस्थित की गयी है जिसमें $\sum | य_ड - र_ड |$ के बंटन की संभाविता जब ड = २५, य और र ०, १, २, ३ और ४ के बराबर ०·२ सम्भाविता के साथ होती है।

यह सिद्ध किया गया है कि तीनों संख्याति संगत हैं, और दिये गये दो न्यादर्शों के अन्तर की सार्थकता की समन्वीक्षा के लिये प्रयुक्त किये जा सकते हैं। ०, १, २, ३ और ४ अर्हा सम संभाविता के साथ चुने गये दो न्यादर्शों के घात की तुलना की परीक्षा अन्यान्य उपकल्पनाओं और विकल्पों के संबंध में की गयी है। और यह पाया गया कि कुछ प्रदेशों के लिये $\sum | य_ड — र_ड |$ और अन्य प्रदेशों के लिये $\sum (य_ड - र_ड)^2$ सबसे अधिक घातक है।

तुल-अपूर्ण इष्टका और आंशिक तुल-अपूर्ण इष्टका समनुविधानों के संबंध में

श्री पुरनेन्दु मोहन राय

अखिल भारतीय खच्छता तथा जन स्वास्थ्य परिषद, कलकत्ता

वर्तमान विश्लेषण कुछेक अपूर्ण इष्टका समनुविधानों के बीच की संयोजन समस्या पर प्रकाश डालती है। सम्पूर्ण तर्क का आधार यह है कि तुल-अपूर्ण इष्टका समनुविधान में, जिसमें किस्मों की संख्या बराबर और संवर्ग का आकार एक समान हैं प्रायः-तुल-अपूर्ण इष्टका समनुविधान जोड़ या घटा दिया जाने से एक प्राय-तुल-अपूर्ण-इष्टका समनुविधान का निर्माण होता है। यह लेखक के पहले के दो लेखों के पूरक हैं—प्रथम जो कलकत्ता के गणित समाज की पत्रिका में और दूसरी जो भारतीय सांख्यिकी पत्रिका "संख्या" में प्रकाशित हुई थी जिसमें इन दो प्रकारों के समनुविधानों के बीच के पारस्परिक संबंध को विस्तार पूर्वक प्रस्तुत किया गया है। इन अध्ययनों का अभिप्राय इस विषय की परीक्षा करना था कि तुल और प्रायः-तुल-अपूर्ण-इष्टका समनुविधान आपस में किस प्रकार संबंधित हैं।

चल-संभावी अप्रतिस्थापित न्यादर्श की दक्षता के संबंध में

श्री दरोगा सिंह

राष्ट्रीय न्यादर्श अधीक्षण संचालक प्रबंध
अर्थ मंत्रालय, भारत सरकार, नई दिल्ली

उपनिदर्शन समनुविधान में प्राथमिक एककों की अप्रतिस्थापित चल-संभाविता के अनुसार चुनाव प्रायः एक ऐसे आगणक की ओर ले जाता है जो प्रस्थापित चल-संभाविता के अनुसार प्राथमिक एककों के निदर्शन, जब ड = २, से अधिक दक्ष होता है। लेकिन यदि ड > २, तब प्रथम लिखित निदर्शन नियम सदा दूसरे नियम से अधिक दक्ष आगणक नहीं भी दे सकता है, और इन दृष्टान्तों में दक्षता, ड के उपरांत, साधारणतः त (श वाँ प्राथमिक निदर्शन एकक चुनने की संभाविता) और डा पर निर्भर करेगी।

लुप्त केदार और तुल्य अपूर्णता के साथ समसंभावि इष्टका समनुविधान

श्री एम. एन. दास

भारतीय कृषि अनुसंधान परिषद, नई दिल्ली

सारांश

किसी भी प्रकार से कितने भी लुप्त हो गये अर्हों के साथ समसंभावि इष्टका समनुविधान के विश्लेषण की विधि का यहाँ वर्णन किया गया है। अपूर्ण समसंभावि इष्टका समनुविधान जिसमें आंशिक किन्तु तुल्य अपूर्णता और तुल्य अपूर्ण इष्टका समनुविधान से अधिक घात हो, प्राप्त किये गये हैं। उपचारों के अन्तर के विचरणों से संबंधित किसी भी प्रकार से लुप्त तीन या चार केदारों के लिये पदसंहतियाँ निकाली गयी है। इनकी विधि उदाहरणों द्वारा चित्रित की गयी है।

आगणन के निष्पत्ति रीति से उपनिदर्शन समनुविधान में स्तृतक्रम की दक्षता

श्री वी. के. मोकाशी

वनस्पति व्यापार विद्यालय, इन्दौर

द्वि-प्रक्रम स्तृत समसंभावि निदर्शन में प्रायः उपएकक की आपूरक सूचना प्राप्य होती है और दोनों गुणक र और य के निष्पत्ति के आगणन में उपयुक्त किये जा सकते हैं। सुखात्मे के अनुसार (१९५०, क, ख और १९५३), जिन्होंने एक चलक के संबंध में स्तृतक्रम की दक्षता निकालने का प्रयत्न किया है, प्रत्येक स्तृत से द्वि-प्रक्रम निदर्शन द्वारा आगणन की निष्पत्ति रीति में स्तृतक्रम की दक्षता निश्चय करने के सूत्र व्युतपादित किये गये है और इस लेख में उपस्थित किये गये हैं।

अभिवेचित द्वि-चलक न्यादर्शों से आगणन

श्री. एम. एन. भट्टाचार्य

प्रतिरक्षा विज्ञान प्रयोगशाला

नई दिल्ली

द्वि-चलक प्रसामान्य समग्र के प्राचल के आगणन के लिये (दि = ०) दोनों चलकों पर ज्ञात रुंडन बिन्दुओं वाले न्यादर्श से भूयिष्ठ संभावना समीकारें व्युतपादित की गयी हैं। यह दिखाया गया है कि ये समीकारें कोटियों और प्रसामान्य वक्र के सारणियों के आवर्तन विधि के प्रयोग से सुलझायी जा सकती है। सूचना व्यूह भी दिये गये हैं जिनसे उपग विचरण और सहविचरण प्राप्त किये जा सकते हैं। इन परिणामों का व्यवहारिक प्रयोग एक संख्यात्मक उदाहरण से निर्देशित किया गया है।

सहसंबंधित द्वि-चलक प्रसामान्य समग्र से लिये गये किसी भी आकार के समसंभावि न्यादर्श में न्यादर्श-प्रमाप विचलन के निष्पत्ति के बंटन के संबंध में एक उल्लेख

श्री डी. पी. बनर्जी

मेरठ कालिज, मेरठ

इस लेख में सहसंबंधित द्वि-चलक प्रसामान्य समग्र से ली गयी डा के आकार के समसंभावि न्यादर्श में न्यादर्श प्रमाप विचलन की निष्पत्ति का बंटन प्राप्त किया गया है। अप्रतिष्ठेय उपकल्पना $धी_1^2 = धी_2^2$ की कल्पना का आधार लेकर इस निष्पत्ति की अर्हा विभिन्न सहसंबंधी गुणकों की (०.१ से ०.९ तक) अर्हाओं के लिये और जब डा ३ से ३० तक चलती है और विभिन्न संभावी संतल ०.८, ०.९, ०.९५ और ०.९९ के बराबर है, सारणी की रचना की गयी है।

1153-55 Printed at The Bangalore Press Bangalore City, by C. Vasudeva Rao, Superintendent.

Announcing a New Publication

SAMPLING THEORY OF SURVEYS WITH APPLICATIONS

By

Dr. P. V. SUKHATME, Ph.D., D.Sc. (Lond.), F.N.I.

Chief, Statistics Branch, Economics Division, F.A.O.

Pages: 522

Price: Rs. 25 (Inland)
U.S. $ 5.50 (Foreign)

Published jointly

by

Indian Society of Agricultural Statistics

and

Iowa State College Press, Ames, Iowa (U.S.A.)

CONTENTS

Chapter I	Basic Ideas in Sampling	Chapter VI	Choice of Sampling Unit
„ II	Basic Theory	„ VII	Sub-Sampling
„ III	Stratified Sampling	„ VIII	Sub-Sampling (continued)
„ IV	Ratio Method of Estimation	„ IX	Systematic Sampling
„ V	Regression Method of Estimation	„ X	Non-Sampling Errors

"... The book has the virtue of thoroughness. There is a final chapter on non-sampling errors (including some new results) which is worthy of every sampler's attention."

—A. Stuart, London School of Economics, in the Journal of Applied Statistics of the Royal Statistical Society, London.

"... The book is indeed a comprehensive and excellent coverage of the theory of sample survey with many interesting applications and illustrations."

—Morris H. Hansen, Bureau of the Census, Washington, U.S.A.

STATISTICAL METHODS

FOR

AGRICULTURAL WORKERS

BY

V. G. PANSE
Indian Council of Agricultural Research

AND

P. V. SUKHATME
Food and Agricultural Organization of the United Nations

Pages: i–xiv+361

Price Rs. 12/-

CONTENTS

Part I. STATISTICAL METHODS:

Chapter I Frequency Distribution
" II Normal and Binomial Distribution
" III Sampling Method and Standard Errors
" IV Tests of Significance of Means and Their Differences
" V The x^2 Test and Estimation of Linkage
" VI Correlation and Regression

Part II. DESIGN OF EXPERIMENTS:

Chapter VII Principles of Field Experimentation
" VIII Randomized Blocks and Latin Square
" IX Factorial Experiments
" X Confounding
" XI Split-plot and Strip-plot Designs
" XII Analysis of Covariance and Missing Plot Technique
" XIII Designs for Plant Breeding Trials
" XIV Groups of Experiments
" XV Practical Considerations in Field Experimentation
" XVI Experiments in Cultivators' Fields
References
Appendices
Index

A simple exposition of statistical methods and design of experiments written primarily for agricultural research workers and suitable as a text for teaching undergraduate and graduate students of agriculture and allied sciences.

Published by

Indian Council of Agricultural Research

NEW DELHI